International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY(IJARETY)

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in | | Impact Factor: 1.982| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 2, Issue 2, March-April 2015 ||

भारत में पंचायती राज व्यवस्था: समस्याएं व समाधान

Dr. Sucheta Gupta

Lecturer in Political Science, Government College Bibirani, (Alwar) Rajasthan, India

शोध-सार: स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था ने 25 वर्ष से भी अधिक समय पूरे कर लिये हैं और इस अवधि में भारत में पंचायती राज व्यवस्था की समस्याएं का अध्ययन करने के लिये सही समय माना जा सकता है कि यह व्यवस्था अब तक कितनी सफल रही है और कितनी असफल। यदि इस व्यवस्था का उद्देश्य जमीनी स्तर पर सरकार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व की एक और प्रणाली का विकास करना था तो स्थानीय सरकार की अवधारणा इस उद्देश्य की प्राप्ति में पूर्णतः सफल रही है परंतु इसके विपरीत यदि हमारा लक्ष्य एक बेहतर शासन प्रदान करना था तो हम इसमें पूर्णतः विफल रहे हैं। कई आज स्थानीय सरकारें अशक्त और अप्रभावी हो गई हैं और उन्हें ऊपरी स्तर की सरकारों के पक्ष समर्थक एजेंट होने तक ही सीमित कर दिया गया है। स्थानीय सरकारों को दिया गया धन उनकी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये पर्याप्त नहीं होता। कई बार राज्यों द्वारा स्थानीय निकायों के कामकाज के प्रति रुचि की कमी के कारण उन्हें समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अक्सर देखा गया है कि चुनावों को स्थगित करने से लेकर राज्य वित्त आयोगों और जिला योजना समितियों के गठन में विफलता तक राज्य सरकारें भिन्न-भिन्न प्रावधानों का उल्लंघन करती रही हैं। कर्मचारियों की कमी और बुनियादी ढाँचे की कमी जैसे मुद्दे सदैव ही स्थानीय निकायों के कामकाज में बाधा डालते हैं। पंचायतों और नगर पालिकाओं की वित्तीय शक्तियों का कुशलतापूर्वक उपयोग अब तक संभव नहीं हो पाया है। बहुत कम ग्राम पंचायतें बाजार, मेलों, संपत्ति और व्यापार आदि पर कर लगाती हैं। अधिकांश राज्य सरकारों ने स्थानीय सरकार के समानांतर ही अन्य निकायों की स्थापना कर दी है ताकि वे स्थानीय सरकार के क्षेत्राधिकार तक पहुँच प्राप्त कर सकें। वर्तमान में स्थानीय सरकार हेतु भारत में कुल सार्वजनिक व्यय का केवल 7 प्रतिशत ही खर्च किया जाता हैजबकि यूरोप में यह 24 प्रतिशत उत्तरी अमेरिका में 27 प्रतिशत और डेनमार्क में 55 प्रतिशत है।

मुख्य शब्द : पंचायती राज, स्थानीय स्वशासन, समस्या समाधान।

शोध प्रविधिः इस शोध पत्र के लिए भारत में पंचायती राज व्यवस्था की समस्याएं व समाधान के साथ-साथ शोधकर्ता ने अपने राजनीतिक, सामाजिक व्यक्तिगत अनुभवों को भी स्थान दिया है। स्थानीय स्वशासन के माध्यम से कैसे लोकतंत्र सुरक्षित रहेगा जैसे विषयों पर इस शोध पत्र में प्रकाश डालेंगे।

I. शोध सामग्री

शोध सामग्री को द्वितीय स्त्रोतों से ग्रहण किया गया है। जैसे इस विषय पर लिखी पुस्तक, समाचारपत्र, पत्रिकाएँ, वेबसाइटें इत्यादि का प्रयोग किया गया।

शोध-आलेखः भारत में पंचायती राज प्रणाली में कार्यात्मक के वितरण का अवैधानिक रूप से पंचायती राज योजना अभी तक दोषपूर्ण है विभिन्न स्तरों पर संरचनाओं के बीच कार्यों का वितरण वैज्ञानिक लाइनों के साथ नहीं किया गया है। विकास और स्थानीय स्व-सरकारी कार्यों के सम्मिश्रण ने स्थानीय स्व-सरकारी संस्थानों की स्वायत्तता पर काफी हद तक अंकुश लगाया है। फिर इसने उन्हें लगभग सरकारी एजेंसियों में बदल दिया है। यहां तक कि पंचायत और पंचायत समिति को सौंपे गए कार्य भी भ्रम की स्थिति प्रयासों के दोहराव और जिम्मेदारी को स्थानांतरित करने के लिए अग्रणी हैं। तीन-स्तरों के बीच असंगत संबंध तीन-स्तरीय कार्यात्मक अधिकारियों के रूप में काम नहीं करते हैं। निम्न संरचना के इलाज के लिए उच्च संरचना की ओर से प्रवृत्ति क्योंकि उसके अधीनस्थ स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। राजनीतिक विश्लेषक योगेंद्र यादव ने पदानुक्रमित वर्चस्व और प्रबलता का सही अवलोकन किया है और कहा है कि "जिला परिषद से पंचायत समिति और उनके द्वारा ग्राम पंचायतों के लिए कदम दर कदम फिल्टर करें"। यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि इस तरह के पारस्परिक संबंध लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की वास्तविक भावना के अनुरूप नहीं हैं। अपर्याप्त वित्त पंचायती राज के सफल कामकाज के लिए धन की अपर्याप्तता भी सामने आई है। पंचायती राज निकायों में उपकर और कर लगाने के संबंध में सीमित शक्तियां हैं। उनके पास राज्य सरकार द्वारा बहुत कम धनराशि है। इसके अलावावे आम तौर पर जनता के साथ लोकप्रियता खोने के डर के कारण आवश्यक धन जुटाने के लिए अनिच्छुक हैं। पंचायती राज के अधिकारियों और लोगों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध का अभाव लोगों की प्रभावी भागीदारी को सुरक्षित करने के उद्देश्य से थालेकिन वास्तव में यह शायद ही होता है क्योंकि प्रमुख प्रशासनिक और तकनीकी पदों पर सरकारी अधिकारियों द्वारा काम किया जाता है। आम तौर पर लोगों और अधिकारियों के बीच समुचित सहयोग और समन्वय का अभाव होता है जैसे प्रखंड विकास अधिकारी जिला अधिकारी आदि। अधिकारी विकास कर्तव्यों का अधिक कुशलता और ईमानदारी से निर्वहन करने में विफल होते हैं। वैचारिक स्पष्टता का अभाव पंचायती राज की अवधारणा और इसके लिए जिन उद्देश्यों के लिए है उनके संबंध में स्पष्टता का अभाव है। कुछ इसे सिर्फ एक प्रशासनिक एजेंसी के रूप में मानते हैं जबकि कुछ अन्य इसे जमीनी स्तर पर लोकतंत्र के विस्तार के रूप में देखते हैं और कुछ अन्य

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in | | Impact Factor: 1.982| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 2, Issue 2, March-April 2015 ||

इसे ग्रामीण स्थानीय सरकार के चार्टर के रूप में मानते हैं। अधिक पेचीदा तथ्य यह है कि ये सभी वैचारिक चित्र एक साथ एक-दूसरे के खिलाफ मिलाने के लिए एक साथ मिल सकते हैं। विभिन्न पंचायती राज संस्थाओं की अलोक तांत्रिक रचना विभिन्न पंचायती राज संस्थाओं का गठन लोकतांत्रिक मानदंडों और सिद्धांतों को अलग करके किया जाता है। पंचायत समिति के अधिकांश सदस्यों का अप्रत्यक्ष चुनाव केवल भ्रष्टाचार और रिश्वत की संभावना को बढ़ाता है। यहां तक कि जिला परिषद में मुख्य रूप से पदेन सदस्य होते हैं। वे अधिकांश भाग सरकारी अधिकारियों के लिए हैं। यह ध्वनि लोकतांत्रिक सिद्धांतों की उपेक्षा करता है। संरचनात्मक कार्यात्मक मोर्चे पर मोहभंग पंचायती राज संस्थानों के प्रदर्शन को राजनीतिक सह जातिगुटबाजी द्वारा विकसित किया गया है. विकासात्मक परियोजनाओं को चिमेरोस (आनुवांशिकी) भ्रष्टाचार अक्षमता प्रक्रियाओं के लिए अपमान जनक दिन के प्रशासन के लिए राजनीतिक हस्तक्षेपपैरोचियल लॉयल्टीज के रूप में प्रस्तुत किया गया है। सच्ची सेवा मानसिकता के बजाय प्रेरित कार्य और शक्ति एकाग्रता। ये सभी पंचायती राज की सफलता के रास्ते में खड़े हुए हैं। इसके अलावा राज्य सरकार की ओर से स्थानीय निकायों को अलग करने की शक्ति स्पष्ट रूप से लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की भावना का उल्लंघन करती है। प्रशासनिक समस्या पंचायती राज निकायों को कई प्रशासनिक समस्याओं का अनुभव होता है।

पंचायती में समस्याओं के समाधान के लिए स्थानीय प्रशासन के राजनीतिकरण की प्रवृत्ति लोकप्रिय और नौकरशाही तत्वों के बीच समन्वय की कमी प्रशासनिक कर्मियों के लिए उचित प्रोत्साहन और पदोन्नति के अवसरों की कमी और सरकारी कर्मचारियों का उदासीन रवैया आदि शामिल हैं। राज संस्थान पंचायती राज संस्थान लोगों के लिए निकटतम शासन इकाई हैं। इसलिए एक कुशल और सुशासन के लिए पंचायती राज संस्थान को मजबूत करने की आवश्यकता है। जैसा कि पंचायत एक राज्य का विषय है, पंचायती राज व्यवस्था मुख्य रूप से राज्यों की जिम्मेदारी है। पंचायती राज मंत्रालय अपनी विभिन्न योजनाओं के माध्यम से पंचायतों के सुदृढ़ीकरण का समर्थन करता है। यह देश के कुछ चिन्हित पिछड़े जिले में पिछड़ा क्षेत्र अनुदान कोष (BRGF) संचालित करता है। राष्ट्रीय ग्राम स्वराज योजना (आरजीएसयू) की योजना के तहत गैर-बीआरजीएफ जिलों को पंचायत घर के निर्माण और निर्माण के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। ई-पंचायत योजना पंचायत को सक्षम बनाती है। अभी भी पूर्ण पंचायती राज संस्थाओं के लिए बहुत अधिक कार्य किए जाने की आवश्यकता है।

II. विचार-विमर्श

पंचायती राज की समस्या ग्रामीण जनता के विकास के लिए केन्द्र राज्य एवं स्थानीय सरकार द्वारा समय-समय पर विकास की योजनाओं का निर्माण एवं क्रियान्वयन तो किया जाता है लेकिन पंचायती राज की कार्यप्रणाली के क्रियान्वयन में चुनौतियों के कारण इन योजनाओं का लाभ उन ग्रामीणों तक नहीं पहुंच पाता है जो वास्तव में जरूरतमंद है। इस चुनौतियों के पीछे प्रशासकीय क्रियान्वयन अभिकरणों से संबंधित तंत्रों के कारण दिन-ब-दिन बढ़ती ही जा रही है। विकास की समस्याएं इस प्रकार है:-

1. योग्य प्रशासकों एवं विशेषज्ञों की चुनौतीः हम सभी जानते है कि योग्य प्रशासकों एवं विशेषज्ञों के अभाव में नियोजन कार्य असफल हो जाता है। पंचवर्षीय योजनाओं के समय में विशेषज्ञ व प्रशासक प्रशासन में आये लेकिन जो स्थान उन्हें मिलना चाहिए वह स्थान उन्हें नहीं मिल पाया। अतः वे अपने आप को निराश व हतास अनुभव करते है एवं साथ-साथ उनका कार्य करने का मनोबल निरन्तर गिरता जाता है तथा वे कार्यरत स्थान को छोड़कर अन्यत्र स्थानों में कार्य शुरू कर देते हैं। यदि संयोग से कोई दक्ष प्रशासक या विशेषज्ञ अपनी इमानदारी लगन परिश्रम के साथ विकासात्मक कार्य करने का प्रयास भी करता है तो उसमें राजनीतिक एवं हाई कमान के दबावों से दबाव में आकर वह विकासात्मक कार्य चाह कर भी नहीं कर सकता जिससे दिन ब दिन प्रशासकों एवं विशेषज्ञों का अभाव बढ़ता ही जा रहा है।

2. सही व विश्वासनीय तथ्यों की कमीः बिना तथ्यों एवं आकड़े के न कोई योजना बन सकती और न ही कोई वास्तविक कल्पना की जा सकती क्योंकि प्रशासन के पास आकड़ों का निराभाव है। आकड़े तो सभी विषयों में मिल जाते हैं परन्तु वे सही व विश्वासनीय नहीं प्राप्त होते है। उदाहरणार्थ विध्वा पेंशन योजना अथवा ग्रामीण आवास योजना। जब तक प्रशासन को सही व विश्वासनीय तथ्यों के आकड़े नहीं प्राप्त होंगें तब तक ग्रामीण विकास के विकासात्मक कार्यों की योजना बनाना एवं उनके क्रियान्वयन व वास्तविक परिणामों की कल्पना करना व्यर्थ होगा।

3. अधिकारियों व पदाधिकारियों के बीच संबंधों की चुनौतीः जहां नीति निर्माण होता है तथा समन्वयन किया जाता है जिले के विकास कार्यक्रमों में ब्रेक का कार्य करता है, जिससे विकास कार्य शिथिल पड़ जाते हैं। विकास की योजनाओं के निर्माण का कार्य एवं क्रियान्वयन में कठिनाइयां आती हैं एवं विकास यथोचित नहीं हो पाता है। वास्तव में यह प्रत्यक्ष अवलोकन से स्पष्ट हुआ कि संबंधों के आभाव के कारण विभागीय तनाव मनमुटाव ईष्यी की भावना का विकास होता है। जिससे आपसी सहयोग व समन्वयन का अभाव दिन-ब-दिन बढ़ता ही जाता है।

4. विकासात्मक योजनाओं के क्रियान्वयन में अनियमितताः पंचायती राज एवं जिला नियोजन परिषदों में अधिकांश राशि योजनाकारों की जेब में चली जाती है एवं शेष बची हुई राशि प्रशासकीय अधिकारियों एवं राजनैतिक पदाधिकारियों की जेबों में चली जाती है और

बची हुई राशि को विकासात्मक कार्यों में लगाया जाता है, जो लगभग 15 प्रतिशत ही होती है। इस बची राशि के आधार पर विकास की योजना एवं कार्यक्रम बनाये जाते हैं, और राशि आधे कार्यक्रम में समाप्त हो जाती है।

5. लालफीताशाही का बढ़ता प्रभावः लोकतंत्र की सफलता की पहली शर्त सत्ता का स्थानीय संस्थाओं को हस्तांतरण करना है। यह तभी संभव है जब राजनीतिक प्रेरणा नीचे के स्तरों से शुरू हो और उच्च स्तर केवल मार्ग निर्देशन का कार्य करें। राज्य सरकारें इन संस्थाओं को अपने आदेशों का पालन करने वाला ऐजेन्ट मात्र न समझे। इसके लिए नौकरशाही की मनोवृत्ति में भी परिवर्तन की आवश्यकता है। लालफीताशाही के प्रभाव में वृद्धि के कारण विकासात्मक कार्यों को पूरा करने में अनावश्यक विलंब होता है। कभी कभी विकासात्मक योजनाओं की फाइलें महीनों तक प्रलंवित पड़ी रह जाती है। जिससे आम आदमी विकास के फलों से बंचित रह जाता है। उदाहरणार्थ भवन निर्माण करवाने, रोड निमार्ण आदि हेतु प्रस्तुत पत्र यदि जिला परिषद या महानगर पालिका में भेजा जाता है तो वह महीनों तक प्रलंवित पड़ी रह जाती है। इतना ही नहीं प्रलंवित कार्य के लिए बार-बार चक्कर लगाने पड़ते हैं जिसके कारण घूसखोरी भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है।

6. जन सहभागी की कमीः पंचायती राज प्रणाली द्वारा कार्यान्वित होने वाली योजनाओं को पूर्ण रूपेण क्रियान्वयन व अनुपालन के लिए जन सहयोग की आवश्यकता होती है। चाहे वे ग्राम पंचायत की योजना हो जिला परिषद की। राज्य व केन्द्र सरकार द्वारा प्रस्तावित योजना को पंचायती राज व्यवस्था से संबंधित अधिकारियों के माध्यम से पूर्ण तो किया जाता है। लेकिन इन योजनाओं के क्रियान्वयन में जन सहयोग के आभाव के कारण योजनाओं के सफल क्रियान्वयन में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। पंचवर्षीय योजनाएं एवं वार्षिक योजनाएं जन सहयोग के बिना सफल नहीं हो सकती। राजनीतिक जागरूकता की कमी भी एक महत्वपूर्ण समस्या है। जो पंचायती राज समस्याओं की सफलता में रूकावट बनते हैं।

7. योजना के क्रियान्वयन में ढीलापनः किसी भी क्षेत्र के विकास के लिए विकासात्मक योजनाओं के निर्माण से कार्य खत्म नहीं हो जाता। किसी योजना का वास्तविक अर्थ व महत्व उसके सफल क्रियान्वयन से होता है। केन्द्र राज्य एवं स्थानीय सरकार द्वारा विकासात्मक योजनाएं तो ढेर सारी लंबी-चौड़ी बनाई जाती हैं। कार्य अर्थात उन योजनाओं का क्रियान्वयन कार्य आरंभ ही नहीं होता जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में आवश्यक कार्यक्रमों व योजनाओं के क्रियान्वयन के ढीलेपन के कारण उस क्षेत्र का विकास केवल कल्पनात्मक रह जाता है।

8. योजनाओं के क्रियान्वयन में स्पाइल पद्वति (Spoil Method) व्यक्तिवादः किसी भी स्थानीय योजना का निर्माण एवं उसका क्रियान्वयन व्यक्तिगत हितों स्वार्थों को मद्दे नजर रखते हुए किया जाता है स्थानीय विकास अर्थात जिला नियोजन के लिए योजनाओं का निर्माण एवं क्रियान्वयन में व्यक्तिगत स्वार्थ के साथ-साथ अधिकारियों का पूर्वा ग्रहसंसाधनों का दुरूपयोग भाई भतीजावाद इत्यादि गंभीर समस्याएं हैं। जिससे जिले का नियोजन समुचित ढंग से नहीं हो पाता और न ही उसका क्रियान्वयन।

9. प्रशासनिक मशीनरी में जनतात्रीकरण का अभावः जिला योजनाओं के निर्माण एवं क्रियान्वयन करने वाली प्रशासनिक मशीनरी में जनतात्रीकरण का आभाव है, जिसके परिणामस्वरूप प्रशासनिक मशीनरी अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में असफल रही है।

10. जनसंवाद का अभावः अशिक्षा और और ग्रामीणों की निर्धनता की विकट समस्या विकराल रूप धारण कर चूकि है। ऐसी स्थिति में ग्रामीण समुदाय व नेतृत्व अपने संकीर्ण स्तरों से उपर उठ नहीं पाते हैं। ऐसी स्थिति में ग्रामीण व्यक्ति पंचायती राज की आवश्यक्ता और महत्व के बारे में अज्ञानतावश और अपनी निर्धनता के कारण कुछ भी नहीं कर पाते। जन संवाद के कारण ग्रामीण विकास की योजनाओं को शासन ग्रामीण जनता तक पहुंचाने में असफल रही है, जिससे ग्रामीण जनता को योजनाओं का सही ढंग से पता ही नहीं लगता और वे योजनाएं बनकर क्रियान्वित कर दी जाती है तथा ग्रामीण गरीब, अशिक्षित व असहाय जनता योजना के आने के इन्तजार में अपना सारा समय व्यर्थ में बर्बाद कर देती है एवं वे योजनाओं के लाभ से वंचित रह जाते हैं।

11. आर्थिक संसाधन का अभावः संस्थाओं में आर्थिक स्त्रोत की कमी इन्हें शासकीय अनुदान पर ही जीवित रहना पड़ता है। अतः पंचायती राज संस्थाओं के संचालन के लिए आय के पर्याप्त एवं स्वतंत्र स्त्रोत प्रदान किये जाने चाहिए ताकि उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बन सके। ग्राम पंचायत हो या जिला परिषद उनके पास धन की समस्या शुरू से ही रही है। इन संस्थाओं को स्वतंत्र आर्थिक स्त्रोत या तो दिये नहीं गये या फिर जो भी दिए गये वे अर्थ शून्य हैं। परिणामतः शासकीय अनुदानों पर ही जीवित रहना पड़ता है।

12. दलगत राजनीति के दुष्परिणामः इस समस्या के विषय में विभागीय आयुक्त का व्यक्तिगत मत है कि जिला नियोजन हो या पंचायती राज व्यवस्था हो, उसके सफलता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा दलगत राजनीति है। जो धीरे-धीरे राजनीति का अखाड़ा बनती जा रही हैं। जिला नियोजन परिषद हो या स्थानीय कोई भी निकाय जैसे पंचायतें। इनमें छोटी-छोटी बातो को लेकर झगड़े हुआ करते हैं। दल बंदी होती है और बहुत सा समय झगड़ों में चला जाता है। पंचायती राज की सफलता में दलगत राजनीति भी विशेश रूकावट रही है। पंचायतें स्थानीय राजनीति का अखाड़ा बनती जा रही हैं। यदि हमारे राजनीतिक दल पंचायतों के चुनावो में हस्तक्षेप करना बंद कर दे तो पंचायतों को दूषित राजनीति से बचाया जा सकता है। स्थानीय निकायों पर स्थानीय, सांसदों, मंत्रियों और प्रभावशाली नेताओं के घरानों एवं रिश्तेदारों का कब्जा हो रहा है।

13. महिला नेतृत्व का अभावः महिला आरक्षण अर्थहीन हो गया है, क्योंकि सरपंच या मुखिया पति नामक एक नवीन प्रजाति का उदय हुआ है। वैमनस्यता में वृद्धि हुई है। स्थानीय निकायों पर संगठित माफियो और अपराधियों का कब्जा हो रहा है। स्थानीय निकायों के सदस्य स्वस्थ योजनाओं के बजाय अधिकतम निर्माण कार्यों में रूचि लेते हैं, पंचायतों के अधिकांश ठेकेदार स्वयं पार्षद या उनके रिश्तेदार हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि दूषित राजनीति संस्कृति के कारण पंचायती राज का क्रियान्वयन संतोषजनक नहीं है।

स्थानीय स्वशासन समस्या का समाधान

पंचायती राज व्यवस्था विभिन्न कारणों से ग्रामीण जनता में नई आशा और विश्वास पैदा करने में असफल रही है तथापि कुछ मायनों में यह संस्था अवश्य सफल रही है। वस्तुतः जब तक ग्रामीणों में चेतना नहीं आती तब तक ये संस्थाएं सफल नहीं हो सकती।

1. आज जरूरत इस बात की है कि योजनाओं के बेहतर समन्वय और क्रियान्वयन पर ध्यान दिया जाये। निगरानी तंत्र को मजबूत बनाया जाय और भ्रष्टाचार पर लगाम लगाने सख्त कार्यवाही की जाये।
2. पूरा प्रशासनिक ढांचा निहित स्वार्थ के कब्जे में है। अधिकारियों एवं आम जनता को योजनाओं के सफल क्रियान्वयन में सहयोग देना चाहिए, ताकि ग्रामीण विकास के लिए प्रशासन को सहयोग मिल सके।
3. विकासात्मक कार्यों को करने के लिए प्रशासकों एवं विशेषज्ञों को स्वतंत्रता होने से वे अपने अनुभवों एवं कार्यकुशलता के आधार पर कार्य कर सकेगें।
4. संबंधित समस्या के वास्तविक आकड़े व तथ्य प्रशासन को प्राप्त कराने में संबंधित व्यक्ति को सहयोग प्रदान करना चाहिए।
5. अधिकारियों एवं कर्मचारियों को प्रस्तावित फाइलों की यथोचित कार्यवाही के साथ एक निश्चित अवधि के अंदर पूर्ण करना चाहिए।
6. राजनीतिक दल व हाई कमानों का नियंत्रण समय समय पर होना चाहिए ताकि उनका मनोबल लगन एवं इमानदारी से कार्य करते रहें, इससे भ्रष्टाचार को बढ़वा नहीं मिलेगा। यह बात किसी से छुपी नहीं है कि ज्यादा नियंत्रण ही भ्रष्टाचार का दूसरा नाम है।
7. विकास कार्यों का नियोजन क्रियान्वयन एवं उसका मूल्यांकन समय-समय पर किया जाना चाहिए जिससे पिछड़े हुए क्षेत्रों का विकास तीव्र गति से हो सकेगा।
8. व्यक्तिगत हितों को ध्यान रखकर योजनाएं नहीं बनानी चाहिए वल्कि जनहित को ध्यान रखकर योजनाओं का निर्माण व क्रियान्वयन करना चाहिए।
9. आय के पर्याप्त एवं स्वतंत्र स्रोत पंचायती राज संस्थाओं को दिये जाने चाहिए ताकि उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बन सके।
10. जिला स्तर के योजनाकार क्षेत्रों में जाकर ग्रामीण वास्तविकताओं को जानने के लिए अपने समय का उचित अंश गांव में गुजारें। यह न केवल आयोजन को कम गूढ़ व अधिक अर्थवान बनाएगा बल्कि अधिक अच्छे क्रियान्वयन की संभावना होगी।
11. आवश्यकता इस बात की है कि ग्राम पंचायती व्यवस्था के नाम पर राजनीति के केंन्द्र ना बन जाय यदि ऐसा होता है तो पंचायतीराज व्यवस्था की जड़ें हिल जायेगी और सच्चे लोकतंत्र की आधार शिला ढह जायेगी।

III. निष्कर्ष

लोकतंत्र की सार्थकता तभी है जब देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था गांवों से लेकर संसद तक प्रत्येक स्तर पर जनता के प्रतिनिधियों की अधिकतम भागीदारी हो। भारत में गांव आर्थिक समृद्धि के प्रतिक हैं। अतः देश तभी समृद्ध हो सकता है जबकि इसकी आत्मा के रूप में गांवों की प्रगति हो और गांवों का सर्वांगीण विकास पंचायतों की सफलता के द्वारा ही संभव है। किसी भी देश प्रदेश या गांव में पंचायती राज व्यवस्था तभी करगर हो सकती है जब उसके क्रिया कलापों को दलगत राजनीति से दूर रखा जाय यह भी सच है कि पंचायतीराज लोकतंत्र का यंत्र भी है। अतः पंचायती राज संस्थाओं में व्याप्त गुटबन्दी को समाप्त करना भी इनके हित में ही होगा। पंचायतों के चुनावों में मतदान को अनिवार्य किया जाना चाहिए। पंचायतों के वित्तिय हालत में भी सुधार अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त प्रशासनिक अधिकारियों को भी पंचायतों के मित्र, सहयोगी और पथ प्रदर्शक के रुप में कार्य करना चाहिये। पंचायती राज व्यवस्था को आम जनता और सरकार के बीच सेतु का काम करना चाहिए। आम जनता की भावना की अवज्ञा करके कोई भी देश लोकतंत्र की सफलता का दावा नहीं कर सकता।

आज व्यवस्था से जुडी अन्य सभी संस्थाओं राजनीतिक दलों की जो बाह्य दुर्दशा एवं धीमा मस्ती है वहीं पंचायतों में भी पाई जाती है। निहित स्वार्थी सत्ता के दलाल कुर्सी कि भूखे राजनीतिकों के अराजक उद्दण्ड चमचे ही सक्रिय हैं। इस कारण पंचायत चुनावों के समय ही मारधाड़ हत्या लूट तथा व सारे हथकण्डे सामने जाने लगते हैं जो सत्ता से सम्बंध रखने वाले अन्य बड़े संकायों के अवसर पर हुआ करते हैं। समर्थ प्रबल गुण्डातत्व ही आम ग्रामीणों को डरा धमकाकर पंचसरपंच मुखिया आदि सभी कुछ चुने जाते हैं। इस चुने हुए प्रतिनिधियों में जिसका बहुमत अधिक होता है वे चारागाहों तथा ग्राम पंचायतों की भूमियों तक को स्वयं चट कर जाते हैं। न्याय के नाम पर मगरमच्छ व भेडिया न्याय होता है। आज भी पंचायतें हथ कण्डों गुण्डागर्दी का शिकार हो रही हैं। अतः इस व्यवस्था को बनाये रखने के लिए इन समस्याओं से उसे परे उठाना है। जिससे ग्रामीण जनता तथा गांवों का पंचायत विकास कर अपने उद्देश्य में फलीभूत हो सके।

इसलिए इन निकायों की दक्षता को कम करने और किसी भी कदम के खिलाफ सतर्क रहने की जरूरत है। देश में स्थानीय स्वशासन को और मजबूत करने के लिए। यह आवश्यक हों गया है कि शासन एवं जनता को अपनी जिम्मेदारियों एवं जबावदारियों

के सक्रियता से निभाने का प्रयास करें। जब तक जनता व शासन अपनी सक्रिय भूमिका का निर्वहन नहीं करेगी तब तक गांधी जी के सपनों को साकार करते की कल्पना अधूरी रहेगी अतः आवश्यक है कि जनता व शासन अपनी भूमिका को समझे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.त्रिपाठी, आर. (1973). पंचायतीराज और ग्रामीण विकास. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन।
2.देसाई, ए. (1975). पंचायतीराज और लोकतंत्र का विकेंद्रीकरण. मुंबई: पॉपुलर प्रकाशन।
3.मेहता, ए. (1977). पंचायतीराज संस्थाएं और ग्रामीण शासन. कोलकाता: पुस्तक महल।
4.पांडे, एस. (1978). भारत में पंचायतीराज व्यवस्था का विकास. लखनऊ: आदित्य पब्लिशिंग हाउस।
5.सेन, डी. (1980). पंचायतीराज और ग्रामीण राजनीति. पटना: यथार्थ प्रकाशन।
6.मिश्रा, ए. (1982). पंचायतीराज और प्रशासनिक सुधार. भोपाल: शिक्षा प्रकाशन।
7.गोस्वामी, एस. (1984). भारत में पंचायतीराज: एक विश्लेषण. दिल्ली: प्रभात प्रकाशन।
8.चतुर्वेदी, आर. (1986). पंचायतीराज और ग्राम विकास. जयपुर: सरस्वती प्रकाशन।
9.राय, बी. (1988). भारत में पंचायतीराज का इतिहास और विकास. मुंबई: शारदा पब्लिकेशन्स।
10.शर्मा, डी. (1990). भारत में पंचायतीराज और राजनीतिक भागीदारी. दिल्ली: मैकमिलन इंडिया।
11.सोलंकी, एम. (1992). पंचायतीराज और प्रशासन का विकेंद्रीकरण. अहमदाबाद: विश्वविद्यालय प्रेस।
12.कौल, एस. (1993). पंचायतीराज और विकास योजनाएं. वाराणसी: ज्ञान गंगा प्रकाशन।
13.गुप्ता, के. (1995). पंचायतीराज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी. नई दिल्ली: एपीएच पब्लिशिंग हाउस।
14.तिवारी, वी. (1997). पंचायतीराज और विकास: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन. जयपुर: पिनाकल पब्लिशर्स।
15.सिंह, पी. (1998). पंचायतीराज व्यवस्था और लोकतंत्र का सशक्तिकरण. लखनऊ: अक्षरधारा प्रकाशन।
16.शुक्ल, आर. (2000). भारत में पंचायतीराज और सत्ता का विकेंद्रीकरण. पटना: रत्ना प्रकाशन।
17.पटेल, एस. (2001). पंचायतीराज और स्थानीय शासन के मुद्दे. हैदराबाद: यूनिवर्सल पब्लिशर्स।
18.सिन्हा, डी. (2003). भारत में पंचायतीराज संस्थाओं की भूमिका. दिल्ली: डीडी प्रकाशन।
19.यादव, ए. (2004). पंचायतीराज व्यवस्था में आरक्षण और राजनीति. चंडीगढ़: सिटी बुक्स।
20.वर्मा, एन. (2005). भारत का पंचायतीराज: चुनौतियां और संभावनाएं. भोपाल: यथार्थ पब्लिशर्स।
21.गोयल, ए. (2007). पंचायतीराज और ग्रामीण विकास का समीक्षात्मक अध्ययन. दिल्ली: यूनिवर्सल पब्लिशिंग हाउस।
22.कुमार, आर. (2008). पंचायतीराज में महिलाओं की भूमिका. नई दिल्ली: प्रभात पब्लिकेशन्स।
23.जोशी, एस. (2009). भारत में पंचायतीराज संस्थाओं की सफलता और असफलता. पुणे: विश्वविद्यालय प्रेस।
24.मिश्रा, डी. (2010). पंचायतीराज व्यवस्था और प्रशासनिक संरचना. गाजियाबाद: ज्ञानदीप प्रकाशन।
25.चौधरी, के. (2012). भारत में पंचायतीराज और शासन का विकेंद्रीकरण. जयपुर: विश्वविद्यालय प्रकाशन।